भारतीय ज्ञान परंपरा मे परीक्षा संचालन एवं मूल्यांकन

email- shailendrashrivastava28@gmail.com
drsk.shrivastava@mp.gov
Website- https:\\www.yogachetna.org
Mob.91 62644 57399

डॉ.शैलेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
परीक्षा नियत्रंक
शासकीय विज्ञान महाविद्यालय
जबलपुर

भारत के संदर्भ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से वर्तमान तक यात्रा–

भारतीय ज्ञान परम्परा में परीक्षा व्यवस्था

भारतीय ज्ञान परम्परा की परीक्षा पद्धतियों, उनकी विशेषताओं, और उनके ऐतिहासिक संदर्भों का विस्तृत विश्लेषण इसमें गुरुकुल और आश्रम पद्धति से लेकर आज की आधुनिक शिक्षा व्यवस्था के समांतर के विकास पर प्रकाश डाला जाएगा। इसके साथ ही, परीक्षा की पारंपरिक विधियों, जैसे मौखिक परीक्षा, शास्त्रार्थ, और अन्य वैकल्पिक तरीकों का विवेचन

भारतीय ज्ञान परम्परा और वैदिक शिक्षा अत्यंत प्राचीन और गहन है। इसे आधुनिक शिक्षा प्रणाली में सम्मिलित कर, वर्तमान परीक्षा प्रणाली को और प्रभावी बनाया जा सकता है। निम्नलिखित बिंदुओं में इसका विवरण दिया गया है

आध्यात्मिक और नैतिक शिक्षा का समावेश

वैदिक परंपरा वैदिक शिक्षा में आध्यात्मिकता और नैतिकता को अत्यधिक महत्व दिया गया था। व्यक्ति के मन, बुद्धि , और आत्मा के विकास पर ध्यान दिया जाता था।

आधुनिक प्रयोग नैतिक शिक्षा को परीक्षा प्रणाली का अनिवार्य हिस्सा बनाया जा सकता है, जिसमें छात्रों को नैतिक मूल्यों, ईमानदारी, सत्य, और सहानुभूति जैसे गुणों का आकलन किया जा सके।

स्वाध्याय; स्वयं.अध्ययन, और चिंतनशील शिक्षा

वैदिक परंपरा गुरुकुल में विद्यार्थियों को स्वाध्याय के लिए प्रेरित किया जाता था। शिक्षक का काम केवल मार्गदर्शन करना होता था, जबकि छात्र को ज्ञान अर्जित करने के लिए स्वयं मेहनत करनी पड़ती थी।

आधुनिक प्रयोग परीक्षा प्रणाली में स्वाध्याय और अनुसंधान आधारित परियोजनाओं को सम्मिलित किया जा सकता है, जिसमें छात्रों के सोचने.समझने की क्षमता का मूल्यांकन हो।

व्यक्तिगत क्षमता के अनुसार शिक्षा

वैदिक परंपरा वैदिक शिक्षा में विद्यार्थियों की रुचिए क्षमता और स्वाभाविक प्रवृत्ति के अनुसार शिक्षा दी जाती थी।

आधुनिक प्रयोग आधुनिक परीक्षा प्रणाली में छात्रों की विभिन्न क्षमताओं ;जैसे तर्कशक्ति, रचनात्मकता, या शारीरिक कौशल, के अनुसार परीक्षा प्रारूप बनाए जा सकते हैं, ताकि छात्रों का समग्र मूल्यांकन हो सके।

योग और ध्यान का समावेश

वैदिक परंपरा योग और ध्यान वैदिक शिक्षा का अभिन्न हिस्सा थे, जिससे शारीरिक और मानसिक संतुलन और अनुशासन का विकास होता था।

आधुनिक प्रयोग परीक्षा से पहले योग और ध्यान को अभ्यास में लाने से छात्रों का तनाव कम हो सकता है और वे मानसिक रूप से परीक्षा के लिए बेहतर तरीके से तैयार हो सकते हैं। इसे परीक्षा प्रक्रिया का हिस्सा बनाया जा सकता है।

अनुभवजन्य शिक्षा

वैदिक परंपरा वैदिक शिक्षा में अनुभवजन्य शिक्षा पद्धति का प्रयोग होता था। ज्ञान को केवल पुस्तकों से नहीं, बल्कि व्यावहारिक जीवन में उतारने पर जोर था।

आधुनिक प्रयोग आज की परीक्षा प्रणाली में भी केवल लिखित परीक्षा के बजाय छात्रों को व्यावहारिक अनुभव और वास्तविक दुनिया की समस्याओं का समाधान करने पर आधारित परीक्षाएं दी जा सकती हैं शाब्दिक ज्ञान के बजाय समझ पर जोर'

'वैदिक परंपरा वैदिक काल में विद्यार्थियों को शाब्दिक ज्ञान के बजाय विषय की गहरी समझ विकसित करने के लिए प्रेरित किया जाता था।

आधुनिक प्रयोग परीक्षा प्रणाली को इस प्रकार से संशोधित किया जा सकता है कि छात्रों की केवल रटने की क्षमता का मूल्यांकन न होए बल्कि उनकी समझ और अवधारणाओं पर ध्यान दिया जाए।

'प्राकृतिक वातावरण में शिक्षा'

'वैदिक परंपरा'शिक्षा का एक महत्वपूर्ण अंग था कि यह प्राकृतिक वातावरण में दी जाती थी, जिससे विद्यार्थी का मानसिक और शारीरिक विकास स्वाभाविक रूप से होता था।

आधुनिक प्रयोग' परीक्षा प्रक्रिया को प्रकृति से जोड़ने के प्रयास किए जा सकते हैं, जैसे कि आउटडोर लर्निंग या प्रकृति से जुड़े प्रोजेक्ट्स।

'गुणात्मक और रचनात्मक आकलन'

'वैदिक परंपरा वैदिक शिक्षा में गुणात्मक विकास पर ध्यान दिया जाता था। हर विद्यार्थी का मूल्यांकन उसकी रचनात्मकता, मानसिक विकास और समाजिक योगदान के आधार पर होता था।

आधुनिक प्रयोग परीक्षा प्रणाली में रचनात्मकता, समस्या सुलझाने की क्षमता, और व्यावहारिक ज्ञान को भी शामिल किया जा सकता है, ताकि छात्रों का गुणात्मक आकलन हो सके।

ज्ञान का जीवन में उपयोग

'वैदिक परंपरा वैदिक शिक्षा का उद्देश्य ज्ञान को जीवन में उतारना था, न कि केवल परीक्षा पास करना।

आधुनिक प्रयोग छात्रों को ऐसी परीक्षाओं का सामना करवाया जा सकता है जिनमें वे जीवन में शिक्षा के वास्तविक उपयोग का प्रदर्शन करें। उदाहरण के लिए, सामाजिक सेवा के माध्यम से परीक्षा प्रणाली में उनके योगदान का मूल्यांकन किया जा सकता है।

इन बिंदुओं के माध्यम से, वैदिक शिक्षा की पुरातन परंपराओं को आधुनिक शिक्षा प्रणाली और परीक्षा प्रणाली में प्रभावी ढंग से समाहित किया जा सकता है, जिससे शिक्षा अधिक समग्र, उपयोगी, और जीवनोपयोगी हो

वैदिक शिक्षा प्रणाली में परीक्षा का स्वरूप गहन, व्यापक, और संपूर्ण विकास पर आधारित था। इसे बेहतर ढंग से समझाने के लिए, प्रत्येक बिंदु का उदाहरण भारतीय ज्ञान परम्परा में परीक्षा की क्या भूमिका हो सकती है परीक्षा ही परिकवता की प्रतीक है परीक्षा का भाव और स्वभाव से लक्ष्य साध्य बनाता है

मौखिक परीक्षा

गुरु अपने शिष्य से वेदों या शास्त्रों का कोई अंश सुनाने के लिए कहते थे। उदाहरण के तौर पर, यदि विद्यार्थी ने ऋग्वेद का अध्ययन किया होता, तो गुरु उसे ऋग्वेद के किसी सूक्त का उच्चारण करने के लिए कहते। इसके बाद गुरु उस सूक्त का अर्थ पूछते और विद्यार्थी को अपने शब्दों में समझाना होता।

गुरु पूछते, "तुम मुझे गायत्री मंत्र का उच्चारण करके उसका अर्थ समझाओ।" विद्यार्थी पहले गायत्री मंत्र का सही उच्चारण करता और फिर बताता, "यह मंत्र सूर्य देवता की प्रार्थना है, जिसमें हम उनके प्रकाश से बुद्धि का विकास करने की प्रार्थना करते हैं।"

शास्त्रार्थ

शास्त्रार्थ में दो या अधिक विद्यार्थी किसी शास्त्र के एक सिद्धांत पर चर्चा करते थे। यह चर्चा तर्कसंगत और विद्वत्तापूर्ण होती थी, जहां हर विद्यार्थी अपने विचार प्रस्तुत करता और शास्त्रों के आधार पर अपने विचार का समर्थन करता।

दो विद्यार्थी "धर्म क्या है?" इस विषय पर शास्त्रार्थ करते हैं। एक विद्यार्थी "धर्म वह है जो समाज और व्यक्ति के कल्याण का मार्ग प्रशस्त करे" कहता है, और अपने तर्क के समर्थन में "मनुस्मृति" से उद्धरण प्रस्तुत

करता है। दूसरा विद्यार्थी कहता है, "धर्म केवल बाहरी कर्मकांड नहीं, बल्कि व्यक्ति के आंतरिक स्वभाव और आचरण में निहित है," और वह गीता के श्लोक का उदाहरण देता है।

आचरण आधारित मूल्यांकन

विद्यार्थी के दैनिक आचरण और जीवनशैली का मूल्यांकन किया जाता था। यह देखा जाता था कि क्या विद्यार्थी सत्य बोलने, ईमानदारी रखने, और दूसरों की सेवा करने के गुणों का पालन करता है।

एक विद्यार्थी प्रतिदिन अपने साथियों और गुरुओं के साथ आदरपूर्वक व्यवहार करता है, समय पर उठता है, नियमपूर्वक ध्यान करता है, और परिश्रम से अध्ययन करता है। गुरु उसके व्यवहार से संतुष्ट होते हैं और उसे श्रेष्ठ आचरण वाला मानते हैं। परीक्षा का यह हिस्सा उसके चरित्र की परीक्षा थी।

ध्यान और योग

विद्यार्थियों से ध्यान और योग के अभ्यास कराए जाते थे ताकि वे शारीरिक और मानसिक संतुलन को प्राप्त कर सकें। इसका उद्देश्य उनके आत्मनियंत्रण और मानसिक स्थिरता का परीक्षण करना था।

एक विद्यार्थी से एक निश्चित अवधि तक पद्मासन में ध्यान करने के लिए कहा जाता है। गुरु यह जांचते हैं कि विद्यार्थी बिना विचलित हुए कितनी देर तक ध्यान कर सकता है। ध्यान के बाद गुरु उससे पूछते हैं, "तुम्हें ध्यान के दौरान क्या अनुभव हुआ? विद्यार्थी बताता है, मैंने मानसिक शांति और गहरे आत्मचिंतन का अनुभव किया। इस तरह उसके ध्यान की क्षमता की परीक्षा होती है।

व्यावहारिक ज्ञान

विद्यार्थियों से यज्ञ, अनुष्ठान, और अन्य धार्मिक कृत्यों में भाग लेने की अपेक्षा की जाती थी। यह उनके शास्त्रीय ज्ञान के वास्तविक जीवन में प्रयोग की परीक्षा थी।

एक विद्यार्थी को यज्ञ कराने की जिम्मेदारी दी जाती है। वह यज्ञ की पूरी प्रक्रिया का पालन करता है, जैसे कि मंत्रों का सही उच्चारण, अग्नि की स्थापना, और अनुष्ठान के नियमों का पालन। गुरु उसके प्रदर्शन को देखते हैं और उसकी जानकारी और व्यावहारिक कौशल का मूल्यांकन करते हैं।

समग्र मूल्यांकन

शिक्षा का उद्देश्य केवल अकादमिक ज्ञान तक सीमित नहीं था। विद्यार्थियों के संपूर्ण व्यक्तित्व, जैसे उनका शारीरिक स्वास्थ्य, नैतिकता, और आध्यात्मिक उन्नति का मूल्यांकन किया जाता था।

एक विद्यार्थी पढ़ाई में तो उत्कृष्ट है, लेकिन यदि उसका आचरण असंतोषजनक होता है, जैसे कि वह असभ्य है या दूसरों के प्रति असहिष्णु है, तो उसे उच्च अंक नहीं दिए जाते थे। उसके संपूर्ण विकास को देखा जाता था, जिसमें उसका आचार, व्यवहार, और समाज के प्रति उसकी जिम्मेदारियां भी शामिल होती थीं।

निष्कर्ष

वैदिक शिक्षा प्रणाली में परीक्षा केवल सैद्धांतिक जानकारी का आकलन नहीं थी, बल्कि जीवन के हर पहलू को समाहित करती थी। इसका उद्देश्य विद्यार्थियों को न केवल विद्वान बनाना था, बल्कि उन्हें एक सच्चा, नैतिक, और समग्र जीवन जीने वाला व्यक्ति बनाना था।

परीक्षा संचालन एवं मूल्यांकन

प्राचीन भारत मे एक से दूसरे पीढ़ियों तक मौखिक एवं लिपिबद्ध परंपराओं के अंतरण मे हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली मे परीक्षा संचालन एवं मूल्यांकन का अभूतपूर्व योगदान रहा है। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली, संचालन एवं मूल्यांकन अतिशय रूप मे धार्मिक रही है जोकि निरंतर चलने वाली परंपरा एवं परिवर्तन को ज्ञान के महासागर से ज्ञान की विविध शाखाओं फैली हुई थी यद्यपि इस बात के समुचित प्रमाण मिलते है कि तत्समय राजकुमारो को युद्धकर्म और राज्य संचालन का भी अनेक ज्ञान कलाओं के अंतर्गत पर्याप्त प्रशिक्षण देकर उनका मूल्यांकन किया जाता था। लेकिन ज्ञान की विविध शाखाओं में औपचारिक एवं

अधिकृत शिक्षा एवं मूल्यांकन गुरू शिष्य के परंपराओं के अंतर्गत सतत एवं निरंतर चलने वाली प्रक्रिया थी। लेकिन उस समय उच्च जातियों (मुख्यतः ब्राह्मणों) को दी जाती थी उसका परीक्षण एवं मूल्यांकन के आकलन के आधार पर विभिन्न कार्यो का दायित्व सौपा जाता था। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली एवं परीक्षा संचालन एवं मूल्यांकन दो धाराओं मे विभक्त थी। प्रथम ब्राहम्ण शिक्षा और दूसरी बौद्ध शिक्षा एवं उनका मूल्यांकन।

लगभग दो हजार वर्ष पूर्व भारत मे विश्वविद्यालयो की स्थापना हुई। नालंदा और तक्षशिला स्थिति विश्वविद्यालय विश्व प्रसिद्ध ज्ञान केन्द्र हुए। एशिया के कोने–कोने से अध्येता ज्ञानार्जन के लिये यहां आते थे।

यूरोप की अपेक्षा भारतीय विश्वविद्यालयों की स्थापना तुलनात्मक रूप से नयी है। 140 वर्ष पूर्व 1857 मे भारत के प्रमुख बंदरगाह महानगरो कलकत्ता, मुबई और चेनन्नई एक साथ तीन विश्वविद्यालयो की स्थापना हुई।

25 वर्ष पश्चात 1882 मे लाहौर और 1887 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय की स्थापना हुई। परन्तु उक्त भारतीय विश्वविद्यालय केवल महाविद्यालयीन शिक्षा का नियंत्रण और समन्वय करते थे अर्थात संबद्धता प्रदायक और परीक्षा संचालन करने वाली संस्थाऐ थी, जिनमे अपने स्तर पर अध्यापन और शोध का कार्य नही होता था।

वर्ष 1911–12 के आस–पास इन संबंद्धता प्रदायक विश्वविद्यालयो से मोह भंग होने लगा। 1916 में स्थापित बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय देश का पहला विश्वविद्यालय था जिसने विश्वविद्यालय के अनुरूप आवासी एवं शिक्षण परीक्षा संचालन एवं मूल्यांकन के रूप मे अपनी पहचान बनाई। तत्पश्चात– मैसूर 1916, उस्मानिया 1918, अलीगढ़ 1920, लखनऊ 1921, दिल्ली 1922, नागपुर व आन्ध्र 1923, आगरा 1927 एवं अन्नामलाई 1929 विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई। जिनमे केवल आन्ध्र, कानपुर और आगरा संबंद्वता प्रदान करने वाले विश्वविद्यालय थे। अब भारतीय विश्वविद्यालयो के स्थापना के साथ ही केन्द्रीय या राज्य विधान मंडलो द्वारा पारित अधिनियम के अंतर्गत सरकारी अनुदान एवं सरकार का नियंत्रण होता था तथा कुलपति संबंधित राज्य के राज्यपाल होते थे। और उपकुलपति तथा कार्यपरिषद के सभी सदस्य अग्रेजी सरकार द्वारा नामित किये जाते थे।

सन 1920–22 के मध्य महात्मा गांधी के नेतृत्व मे असहयोग आदोलन के दौरान अनेक राष्ट्रीय विश्वविद्यालयो की स्थापना हुई जिसमे गुजरात विद्यापीठ, काशी विद्यापीठ, बिहार विद्यापीठ, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ और जामिया मिलिया इस्लामिया प्रमुख थे।

शांति निकेतन मे गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा स्थापित विश्व भारती विश्वविद्यालय में अनेक शैक्षणिक प्रयोग जिसमे परीक्षा संचालन एवं मूल्यांकन इत्यादि किये गए।

श्री जमशेद जी टाटा ने बैगलोर मे टाटा ऑफ इंस्टीटूयूट की स्थापना की। देश की आजादी के समय हमारे पास 19 विश्वविद्यालय, 496 महाविद्यालय और 237456 छात्र थे। मध्यप्रदेश में पहला विश्वविद्यालय 1946 मे सुप्रसिद्ध न्यायविद सर हरीसिंह गौर द्वारा सागर मे स्थापित किया गया।

विगत 77 वर्ष मे उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे जबरजस्त प्रगति हुई। आज देश मे अनेक विश्वविद्यालय और महाविद्यालय है मध्यप्रदेश मे ही विश्वविद्यालय और विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त संस्थाऐ भी अनेक है।

नवीन शासकीय महाविद्यालयों में प्राचार्य कक्ष और कार्यालय की व्यवस्था किसी कार्यरत स्कूल अथवा नगर पालिका/जनपद कार्यालय के किसी तंग–अंधेरे कमरे अथवा किसी धर्मशाला में हो भी गई तो कक्षाओं, प्रयोगशालाओं, उपकरणों और ग्रंथालयों को समस्या जस की तस बनी रही। गत चार दशकों मे विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों की संख्या में

आशातीत वृद्धि हुई है। विद्यार्थियों की संख्या बढ़ी है, प्राध्यापकों में मात्रात्मक बढ़ोतरी हुई है लेकिन जब संख्यात्मक और मात्रात्मक वृद्धि होती है।

पूर्व में प्राध्यापको और विद्यार्थियों में अध्ययन और स्वाध्याय की प्रवृत्ति थी। पुस्तकालयों और वाचनालयों में उनकी गहरी संलग्नता थी लेकिन अब लगता है कि न तो विद्यार्थी की रूचि अध्ययन में है और न ही प्राध्यापकों की प्राथमिकता अध्यापन है। स्वाध्याय अब दुलर्भ हो अपवाद होता जा रहा है। ऐसे विद्यार्थी और प्राध्यापक अब लगभग उपहास के पात्र बनते जा रहे हैं, जो पढ़ने–लिखने के प्रति समर्पित हैं। आज भी निश्चय ही निष्ठावान प्राध्यापक और समर्पित विद्यार्थी मिल जायेगे। यह आवश्यक हुआ है कि अनपातिक दृष्टि से उनकी संख्या में गिरावट आयी है, जिसके लिए कमोवेश हम सब जिम्मेदार हैं। नीति निर्धारक, राजनेता, प्रशासक, प्राध्यापक, विद्यार्थी, अभिभावक और समूचा समाज। शिक्षा नीति के प्रसंग में तदर्थवाद (एडहॉकीज्म) ऊपर से नीचे तक हावी है। राजनीतिक नेतृत्व–जिसकी प्राथमिकता सत्ता और वोट बैंक हैं, प्रशासन जिसके लिये आज भी शिक्षा एक अनावश्यक सेवा है, प्राध्यापक जिसके लिए शिक्षा मजबूरी में अपनाया गया व्यवसाय है। विद्यार्थी जिसके लिए शिक्षा सिर्फ रोजगार पाने के लिए डिग्री रूपी अनुमति पत्र है और जहां उसे अपना भविष्य अंधकार–मय दिखाई देता है। अभिभावक जिसकी दृष्टि में उच्च शिक्षा विवाह या रोजगार या नौकरी के मुन्तजिर अपने बच्चों के लिए समय बिताने का साधन है और पूरा समाज हो शिक्षा और शिक्षक से अधिक ऊपरी लाभ वाले पद और व्यवसाय को महत्व देता है। जिस समाज में एक शिक्षक से अधिक पटवारी, नायब तहसीलदार या दरोगा का आदर और सम्मान होता हो, वहां उच्च शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक गिरावट तो आयेगी ही। दरअसल शिक्षा के क्षेत्र में लगातार गिरावट का मुद्दा पूरी व्यवस्था और सामाजिक संरचना से जुड़ा है। हम इसके लिए किसी एक ही वर्ग या समूह को कटघरे में खड़ा नहीं कर सकते।

प्रदेश ही नहीं देश के इतने सारे विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में इतने शोध और अनुसंधान हो रहे हैं, इतने पी.एच.डी. और डी.लिट. निकल रहे है, लेकिन उनकी सामाजिक परिणति और सार्थकता क्या है? इसलिए कि वे सब वेतन वृद्धि और पदोन्नति से जोड़ दिये गये हैं। प्राध्यापकों के लिए वे कैरियर की सीढ़ियां मात्र हैं। उनके कोई बौद्धिक नवोन्मेष या नवाचार की उत्कृष्टता नहीं है। दुर्भाग्य से हमारे विश्वविद्यालय और महाविद्यालय, हमारी सामाजिक संरचना के प्रयोजन मलक लक्ष्यों की दृष्टि से लगातार अप्रासांगिक होते जा रहे हैं।

आज विद्यार्थी का आदर्श और उसकी प्रेरणा कोई समर्पित और निष्ठावान प्राध्यापक, विद्वान या कलाकार नहीं है। समकालीन परिदृश्य में लगभग हर राजनीतिक दल की युवा–शाखाऐं, अभिभावकों के धन की कीमत पर अपने कार्यकर्ताओं की फौज या भीड़ इन विद्यार्थियों में से ही संगठित करते हैं।

महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में अध्ययन–अध्यापन के समकालीन परिदृश्य पर एक वरिष्ठ साथी की टिप्पणी थी कि "आजकल महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में सिवाय पढ़ने–लिखने के सब कुछ हो रहा है।" जाहिर है कि जब विद्यार्थी पढ़ना नहीं चाहते तो उन्हें प्राध्यापक पढ़ायेगा कैसे? और जब प्राध्यापक पढ़ाना ही नहीं चाहते तो विद्यार्थी पढ़ेगे कैसे?

कुल मिलाकर परिसरों का माहौल अब "अन–अकादेमिक" ही नहीं "एन्टी–अकादमिक" होता जा रहा है। यह गिरावट प्रदेश और देश में नहीं बल्कि लगभग एक वैश्विक प्रवृत्ति है और इसकी मूल वजह कक्षाओं में हो रहे अध्यापन की प्रासंगिकता, उसकी उपादेयता और उसके स्तर में लगातार पतन है। इसमें उच्च शिक्षा विभाग ने क्या–क्या प्रयत्न नहीं किये?

हाजिरी रजिस्टरों की मासिक जांच, प्राध्यापकों का रोजनामचा, हर कक्षा और विषय की हाजिरी चिटें, वार्षिक परीक्षाओं के अवसर एक निश्चित प्रतिशत के नीचे उपस्थिति के लिए आर्थिक दण्ड, लेकिन सबका नतीजा–सिफर!

विद्यमान परीक्षा प्रणाली पूरी तरह अपनी प्रासंगिकता खो चुकी है। इधर इकाई और वस्तुनिष्ठ प्रश्न पद्धति से आयोजित परीक्षा में तो और भी बड़ी विसंगति आ गयी है। विद्यमान परीक्षा प्रणाली में हम विद्यार्थी के ज्ञान व तैयारी की बजाय सीमित इकाई में सिमटे विषय के तत्कालिक स्मरण और उसके रटने की क्षमता की जांच ही तो करते है। फिर आजकल परीक्षा परिणामों के जल्दी से जल्दी घोषित किये जाने और तथाकथित अकादमिक कैलण्डर के परिपालन के लिए केन्द्रीकृत मूल्यांकन की जो प्रथा अपनायी जा रही है, उसमें हमारे आदरणीय मूल्यांकनकर्ता पारस्परिक होड़ में जिस आश्चर्यजनक गति से उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन करते हैं, उसने भी विद्यमान परीक्षा प्रणाली के अंतर्विरोधों का उजागर कर दिया है। परीक्षा परिणामों के प्रतिशत में इजाफे की प्रतिस्पर्धा के प्रसंग में मुझे एक समिति की बैठक में एक माननीय सदस्य की रोचक टिप्पणी थी कि "एक विश्वविद्यालय में इस बार सिर्फ वही विद्यार्थी फेल हुए, जिन्होने परीक्षा का आवेदन पत्र नहीं भरा था।"

परीक्षा प्रणाली में सुधार के प्रसंग में यह सुझाव कुछ अतिवादी लग सकता है, लेकिन समकालीन हालात में वही सबसे कारगर उपाय प्रतीत होता है। हमारी रोजगारोन्मुखी शिक्षा के समकालीन माहौल में जब बड़ी से बड़ी डिग्री के बावजूद लगभग हर छोटी बड़ी नौकरी के लिए "प्रवेश परीक्षाऐं" और "प्रतियोगी परीक्षाऐं" आयोजित हो रही हैं, तब विश्वविद्यालयों को अपनी परीक्षाऐं आयोजित करने का कष्ट क्यों करना चाहिए? महाविद्यालय या विश्वविद्यालय को विद्यार्थियों को सिर्फ इस आशय का एक प्रमाण–पत्र जारी करना चाहिए कि वे इस संस्था में, अमुक पाठ्यक्रम की फला कक्षा में, इस अवधि के लिए नामांकित "एनरॉल्ड" थे। जरूरी नहीं कि वे कक्षाओं में उपस्थित भी रहे हों। क्योंकि सभी प्रतियोगी परीक्षाओं की अपनी तैयारी के लिए अब वे कक्षकाओं के अध्यापन के मोहताज नहीं है। इससे बेरोजगार युवक–युवतियों को वांछित विभाग और सेवा के लिए आयोजित प्रतियोगी परीक्षा के लिए अपने स्तर पर पूरी तैयारी का मौका मिलेका। लेकिन मुझे नहीं लगता है यह सुझाव अभी अमल में लाया जायेगा। इसकी वजह यही है कि मौजूदा परीक्षा प्रणाली में हम सबके निहित स्वार्थ हैं। प्राध्यापकों की सालाना ऊपरी आमदनी विश्वविद्यालयों को मिलने वाली फीस की भारी भरकम रकम और विद्यार्थियों के लिए परीक्षा की वैतरणी पार करने की तयशुदा आसान तरकीबें।

नये–नये महाविद्यालयों की स्थापना से हमें खुशी होनी चाहिए कि प्राध्यापकों की संख्या, हमारी अपनी प्रजाति बढ़ रही है। लेकिन भवन–विहीन, प्राचार्य–विहीन, प्राध्यापक–विहीन और यहां तक कि विद्यार्थी–विहीन इन महाविद्यालयों की विद्यमान हास्यास्पद स्थिति के लिए हमारे नीति निर्धारकों, प्रबंधकों और प्रशासकों के और कौन जिम्मेदार है? ये लोग समझ रहे हैं कि इससे वे अधिक से अधिक लोगों को लाभांवित कर रहे हैं। जाहिर है यह उनका भ्रम है। यह संसाधनों का दुरूपयोग भी है। मसलन एक ही नगर में एक ही विषय में चार–चार महाविद्यालयों में परास्नातक कक्षाऐं शुरू करने का क्या औचित्य है? इनमें कहीं चार–पांच विद्यार्थी हैं, कहीं सिर्फ एक–दो। एक महाविद्यालय के एक विभाग में तो वर्षो से एक भी विद्यार्थी नहीं है। पूरा स्टाफ मौजूद है, लेकिन उसे बन्द करने का साहस हममें नहीं है। क्या ऐसा नहीं हो सकता कि परास्नातक अध्ययन के लिए महाविद्यालय नामित कर दिए जाए और उसे विषय के सारे विद्यार्थी वहीं पढ़े। इसी तरह गली–गली, डगर–डगर महाविद्यालय शुरू करने की बजाय सर्व–सुविधा संपंन्न महाविद्यालय जिला मुख्यालक में ही

क्यों न रहने दिया जाए। या पत्राचार और स्वाध्याय की ओर अधिकाधिक विद्यार्थियों को क्यों न प्रेरित किया जाए। "मुक्त विश्वविद्यालय" की तर्ज पर "खुला महाविद्यालय" भी क्यों न प्रारंभ किया जाए।

उच्च शिक्षा के संख्यात्मक विस्तार से अधिक आवश्यक है कि हम आदर्श अर्थात जो होना चाहिए, कि न करके शिक्षक की हैसियत से यार्थत कालीन जो हो रहा है उस पर दृष्टि डाले तो पाऐगे कि नीतिगत समस्याओं का निदान शिक्षको के पास है ही नही, न ही शिक्षा नीतिगत समस्याओं के लिए जिम्मेदार है क्योकि उच्च शिक्षा के आर्थिक, नीतिगत और प्रशासनिक मामले केवल नौकरशाओ द्वारा तय होते है। वर्तमान परिस्थिति मे उच्च शिक्षा मे नवीन शिक्षा नीति को आगमन होने से शिक्षा की मूलभूत आवश्यकताऐ नए सिरे से आत्मपरक सोच को, यर्थाथ दृष्टि से समग्र रूप मे भारतीय ज्ञान परंपरा का यर्थाथ रूप से स्वीकार करने का कदम होगा एवं विद्यार्थियों को ज्ञान, कौशल और नागरिकता के संस्कार देगी।

नई शिक्षा नीति इस बात की भी अनुमति देती है कि छात्र फिजिक्स, केमेस्ट्री पढ़ते हुए भी हिन्दी का विद्वान बन सके, संस्कृत का ज्ञान प्राप्त कर सके इतिहास का अध्ययन कर सके तथा अपनी योग्यता परख का परीक्षण कर अध्ययन कर सके क्योकि शिक्षा एकांगी नही होती ज्ञान का मतलब है संपूर्ण ज्ञान।

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसमें भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुसार पाठ्यक्रमों में समावेश है।
- जैसे मानवीय मूल्य, योग, महिला सशक्तिकरण और नैतिकता।
- स्नातक के स्तर पर रिसर्च को प्रोत्साहित किया जाएगा।
- च्वॉइस बेस्ड क्रेडिट सिस्टम।
- कला, वाणिज्य और विज्ञान के विषयों में मिश्रित चयन की स्वतंत्रता।
- व्यावसायिक और योग्यता संवर्धन पाठ्यक्रमों में अध्ययन के अवसर।
- इंटर्नशिप, अप्रेन्टिसशिप, फील्ड प्रोजेक्ट, कम्यूनिटी एंगेजमेंट एंड सर्विवसेस का फर्स्ट ईयर में समावेश।
- प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना/ओपेन यूनिवर्सिटी के माध्यम से व्यावसायिक एवं योग्यता संवर्धन पाठ्यक्रम में ऑनलाइन अध्ययन की सुविधा है।
- एक कालेज में कई विषयों की पढ़ाई की सुविधा।
- एन.सी.सी., एन.एस.एस. और शारीरिक शिक्षा को पाठ्यक्रम के रूप में अध्ययन की सुविधा।
- सकल नामांकन अनुपात में वृद्धि करने का लक्ष्य।
- शिक्षा की पहुंच, समानता और गुणवत्ता पर विशेष ध्यान।
- विद्यार्थियों में रचनात्मक सोच, तार्किक निर्णय और नवाचार की भावना को प्रोत्साहन देना।
- डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा दिया जाएगा।
- एक विश्वविद्यालय से दूसरे विश्वविद्यालय और एक कॉलेज से दूसरे कॉलेज में स्थानांतरण पर क्रेडिट ट्रांसफर की सुविधा है।

क्रेडिट प्रणाली नई शिक्षा नीति मे अकादमिक संरचना के अनुसार मेजर विषय पर 54 क्रेडिट, माइनर विषय पर 28 क्रेडिट, वैकल्पिक विषय पर 18 क्रेडिट, कौशल संवर्धन

पाठ्यक्रम पर 12 क्रेडिट, आधार पाठ्यक्रम पर 24 क्रेडिट और फील्ड प्रोजेक्ट, इंटर्नशिप आदि पर 24 क्रेडिट मिलेंग। कुल 160 क्रेडिट प्वाइंट।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के क्रियान्वयन के अंतर्गत स्नातक स्तरीय पाठ्यक्रम में लागू नवीन पाठ्यक्रम संरचना में व्यावसायिक शिक्षा (4 क्रेडिट) का अध्ययन करना विद्यार्थी के लिए अनिवार्य है।

व्यावसायिक विषय के अतिरिक्त परियोजना कार्य/शिक्षुता/प्रशिक्षुता/सामुदायिक जुड़ाव के पाठ्यक्रम में से किसी एक विद्या का चयन कर 4 क्रेडिट का प्रशिक्षण/अध्ययन करनी भी विद्यार्थी के लिए अनिवार्य है।

कौशल संवर्धन डेस्क : इन पाठ्यक्रमों से संबंधित सभी जिज्ञासाओं, समस्याओं का उचित व संवेदनशीलता के साथ निराकरण का अवसर मिलेगा जिसका विद्वान, प्राध्यापको द्वारा मार्गदर्शन दिया जाएगा।

संपूर्ण प्रक्रिया को विभिन्न चरणों मे विद्वान प्राध्यापक/शिक्षाविद् द्वारा के क्रियान्वयन कि जाने की योजना है–

शिक्षक–अभिभावक (Teacher Guardian) एवं शिक्षक/पर्यवेक्षक

- 25–30 विद्यार्थियों का समूह एक शिक्षक–अभिभावक (Teacher Guardian) को आबंटित किया जाए तथा संबंधित शिक्षक इन विद्यार्थियों की पाठ्यक्रम संबंधी समस्याऐं का निराकरण करें।
- विद्यार्थी की अभिरूचि, वरीयता क्रम व उपलब्धता के आधार पर शिक्षक–अभिभावक, विद्यार्थियों के लिए गतिविधि नियत करेंगे।
- सामान्य रूप से उनके द्वारा चयनित मुख्य, गौण, वैकल्पिक विषय से संबंधित क्षेत्र में कार्य करने की प्राचार्य से विशेष लिखित अनुमति।

परियोजना कार्यः

- परियोजना कार्य (फील्ड वर्क/केस स्टडी/भ्रमण आदि के आधार पर) के विषय का व्यक्तिगत एवं सामाजिक महत्व भी होना चाहिए, तथा यह एक शोध विषय के रूप में अनुसंधान को प्रेरित करने वाला हो।
- फील्ड वर्क आधारित परियोजना कार्य में विद्यार्थी को 07 पूर्ण दिवस अथवा 15 दिवस अंश कालीन (पार्ट टाइम)
- परियोजना कार्य समूह में विद्यार्थियों की संख्या 4–6

परियोजना कार्य का मूल्यांकनः

- परियोजना कार्य का अंतिम मूल्यांकन विश्वविद्यालय द्वारा नामित बाह्य परीक्षक के द्वारा किया जावेगा।
- आंतरिक (सतत्) एवं बाह्य मूल्यांकन में अंकों का विभाजन क्रमशः 50–50 अंको का होगा (अ) आंतरिक मूल्यांकन (50 अंक) विद्यार्थी समूह द्वारा प्रस्तुत 03 रिपोर्ट में से, दो श्रेष्ठ रिपोर्ट की आंतरिक मुल्यांकन हतु गणना की जायेगी।
  (ब) बाह्य मूल्यांकन (50 अंक) का विभाजन निम्न अनुसार होगाः
  30 अंक– अंतिम (Final) प्रोजेक्ट रिपोर्ट एवं प्रस्तुतिकरण (सामूहिक)
  20 अंक– मौखिकी (व्यक्तिगत)

मूल्यांकन हेतु निर्देशः

- आंतरिक एवं बाह्य मूल्यांकन में अंको का विभाजन क्रमशः 50 एवं 50 अंकों का होगा

संबंधित संस्था व्यक्ति द्वारा उपलब्ध कराये गए प्रतिपुष्टि प्रपत्र (Feedback Form) के आधारा पर विद्यार्थी का आंतरिक मूल्यांकन किया जायेगा जो कि कुल 50 अंक का होगा।

बाह्य मूल्यांकन (50 अंक) का विभाजन निम्न अनुसार होगाः

30 अंक– अंतिम रिपोर्ट एवं प्रस्तुतिकरण

20 अंक– मौखिकी

विद्यार्थी के कार्य निष्पादन एवं अर्जित उपलब्धियों (Learning Outcome) के आधार पर मूल्यांकन किया जायेगा।

व्यावसायिक पाठ्यक्रम

चयनः– ऐसे व्यावसायिक पाठ्यक्रमों को भी चिन्हित किया जावे जिनकी शिक्षण व्यवस्था महाविद्यालय स्वयं अपने शिक्षकों के सहयोग से कर सकते हैं अथवा निकटस्थ महाविद्यालय से पारस्परिक सहयोग के लिए MOU के आधार पर पाठ्यक्रम प्रारंभ कर सकते हैं।

प्रत्येक महाविद्यालय व्यावसायिक शिक्षा के लिए शासन द्वारा निर्धारित 25 व्यावसायिक विषयों की सूची में से न्यूनतम 2 विद्यार्थी को महाविद्यालय द्वारा उपलब्ध कराये गये पाठ्यक्रमों से ही व्यावसायिक पाठ्यक्रम का चुनाव किया गया है, यदि विद्यार्थी महाविद्यालय द्वारा उपलब्ध कराए गये व्यावसायिक पाठ्यक्रमों से अध्ययन न करके किसी अन्य पाठ्यक्रम को अपनी रूचि एवं ज्ञान के आधार पर अध्ययन करना चाहता है तो उसे SWAYAM पोर्टल पर उपलब्ध निर्धारित पाठ्यक्रमों में से महाविद्यालय से अनुमति प्राप्त कर स्वयं के व्यय से यह पाठ्यक्रम पूर्ण करना होगा, व्यावसायिक पाठ्यक्रम का मूल्यांकन– व्यावसायिक पाठ्यक्रम के अंतर्गत 2 क्रेडिट के सैद्धांतिक एवं 2 क्रेडिट के प्रायोगिक पाठ्यक्रम होगे, मूल्यांकन का मुख्य आधार होगा कि विद्यार्थी द्वारा निर्धारित CLO (Course Learning Outcome) प्राप्त कर लिए गए हैं या नही तथा उनका स्तर क्या है? सैद्धांतिक प्रश्न पत्र का मूल्यांकन विश्वविद्यालय द्वारा नियमानुसार किया जाायेगा जबकि प्रायोगिक कार्य का मूल्यांकन निम्नानुसार किया जायेगाः

आंतरिक (सतत्) एवं बाह्य (विश्वविद्यालयीन) मूल्यांकन में अंको का विभाजन क्रमशः 50 व 50 अंकों का हैः

(अ) आंतरिक मूल्यांकन (50 अंक) हेतु निम्नानुसार विभाजन होगाः

5 अंक– उपस्थिति 30 अंक– प्रायोगिक रिकॉर्ड

15 अंक – मौखिकी

(ब) बाह्य (विश्वविद्यालयीन) मूल्यांकन (50 अंक) का विभाजन निम्न प्रकार होगा

40 अंक– निर्धारित सूची अनुसार प्रायोगिक कार्य परीक्षा

10 अंक– मौखिकी

अतः भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुसार परीक्षा के संचालन एवं मूल्यांकन मे भारत के संदर्भ मे अभी तक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, से वर्तमान तक की यात्रा करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि नवीन शिक्षा नीति हमारी उस परपंरा का जीवंत उदाहरण होगी, जो कि भारत की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, जो विरासत है आज के दौर मे हमारे समाज के सभी वर्गो को विशेषकर युवा एवं किशोर अवस्था के तरूणो को जीवन ऊर्जा एवं मानसिक दृणता प्रदान करने की एवं सफलता के मार्ग को आसान बनाने व आगे बढ़ने के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होगी इन्ही उद्देश्यो को सार्थकता प्रदान करने के लिए मेरे द्वारा वेबसाईट (Website-https:\\www.yogachetna.org) का निर्माण किया गया है जिस पर विभिन्न विषयो पर **भारतीय ज्ञान परंपरा द्वारा– योग चेतना की विकास यात्रा से सजगता प्रबंधन** कैसे किया जा सकता है मार्गदर्शन प्रदान करेगी।